दलितों व शोषितों का पाक्षिक पत्र

हमायती

सम्पादक–डॉ0 सोहनपाल सुमनाक्षर

❑ वर्ष 63 ❑ अंक-18-19 ❑ दिल्ली ❑ जून-(द्वितीय)-जुलाई (प्रथम) ❑ मूल्य : 2 रु.

दलितों का गौरवशाली इतिहास : षड्यंत्रपूर्वक मिटाया गया

• डॉ. नवल वियोगी

किसी विद्वान ने कहा है कि किसी कौम के इतिहास को मिटा दो वह स्वयं ही मिट जायेगी। उक्त तथ्य को ब्राह्मण बुद्धिजीवी वर्ग ने अब से बहुत पूर्व काल में ही समझ लिया था अतः अपने सबसे बड़े विरोधी तथा शत्रु शूद्रों को व उनकी सभ्यता को मिटाने के लिए न केवल इतिहास के पन्नों में ही हेरफेर किया बल्कि कभी कभार तो सम्पूर्ण ग्रन्थों को ही जड़मूल से नष्ट कर दिया गया। सर्वप्रथम सिन्धु घाटी सभ्यता को लेते हैं – इस सभ्यता के मुख्य शहर मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा की खुदाई में प्राप्त पुरातत्वीय प्रमाणों से पता लगा है यह दुनिया की तीन सर्वाधिक प्राचीन सभ्यताओं में से एक थी। यहां के निवासी बहुत सभ्य थे। ऊंची–ऊंची चार दीवारों से घिरे साफ सुथरे शहरों में निवास करते थे। आधुनिक प्रकार की सुन्दर नगर योजना, ढकी हुई जल निकास व्यवस्था, पक्के मकान जिनमें से प्रत्येक में कुएं, स्नान घर, इंगलिश प्रकार की बैठक वाले शौचालय इस सभ्यता की सर्वाधिक मुख्य व चौंका देने वाली विशेषताएं थीं। सवर्ण जातियों के इतिहासकार इस सभ्यता को प्राप्त कर खुशी के मारे फूले न समाए कि उन्होंने अपने पूर्वजों की एक महान सभ्यता को ढूंढ खोजा है। मगर जब खुदाई में प्राप्त पुरातत्वीय प्रमाणों से पता लगा कि यह तो द्रविड़ों की सभ्यता थी और इसके सृजक शूद्रों के पूर्वज थे, तो मानो उनकी नाक कट कर नीचे आ गिरी हो। उनके लिए सर्वाधिक दुःख की बात तो यह थी कि उस पर किसी प्रकार की पर्दापोशी करना असम्भव था। क्योंकि अभी तक निष्पक्ष भावना व सत्य के पुजारी अंग्रेज इतिहासकार तथा पुरातत्व वेत्ता देश में ही थे। मगर जब अंग्रेज यहां से पलायन कर गये तो मानो एक सवर्ण अवसर उनके हाथ लग गया हो। स्पष्टतयः विश्वविद्यालय तथा पुरातत्वीय सर्वेक्षण विभाग में अब उनका ही एकाधिकार था और यह कहावत चरितार्थ हो रही थी कि 'सइयां भये कोतवाल फिर डर काहे का' जो जी चाहे करें।

अतः आहिस्ता–आहिस्ता तथ्यों को तोड़ा मरोड़ा जाने लगा है। इतिहास पर पर्दापोशी की जाने लगी। ऐसे महानुभावों में मुख्य थे दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आर. एन. शर्मा तथा भारतीय पुरातत्वीय सर्वेक्षण विभाग के अध्यक्ष श्री एस. आर. राव। पहले ने प्रमाणित किया है कि शूद्रों की उत्पत्ति आर्यों के उस वर्ग में से हुई जो आर्थिक रूप से या अन्य किसी कारण से पिछड़ गये थे जो उचित नहीं।

दूसरे श्री एस. आर. राव ने सिन्धु घाटी सभ्यता के तीन प्रमुख शहरों की खुदाई में प्राप्त मानवीय ढांचों को लेकर कहा है कि हड़प्पा में प्राप्त प्रमाणों के आधार पर कहा जा सकता है कि थोड़े से अन्तर के साथ वहां ऐसे ही लोग निवास करते थे जैसा कि आज पंजाब में, मोहनजोदड़ों में ऐसे ही थे जैसे कि आज सिंध प्रान्त में, लोथल में भी वैसे ही थे जैसे कि आज गुजरात में। आज पंजाब तथा सिन्ध में आर्य तथा गुजरात में सीधीयन आर्य नस्ल के मनुष्य निवास करते हैं यानि इतिहासकार ने निर्णय दिया है कि हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ों में आर्य तथा लोथल में आर्य सीथियन लोगों की आबादी थी, जो उचित नहीं है। मोहनजोदड़ों में प्राप्त 11 मानवीय ढांचों में से 3 आस्ट्रोलायड प्रकार के 6 भूमध्य सागर तटीय प्रकार के, एक मंगोलियोन तथा एक अल्पाइन प्रकार का था। हड़प्पा के आर–37 कब्रिस्तान में से प्राप्त 31 ढांचों में से 21 आस्ट्रोलायड प्रकार 10 सुमेरियन या भूमध्यसागर तटीय प्रकार के लोग थे। उसी चहुनदाड़ो से प्राप्त एक मात्र खोपड़ी भी द्रविड़ प्रकार की थी। लोथल में प्राप्त 8 ढांचों में से 4 आर्य 3 भूमध्य सागर तटीय प्रकार तथा एक अल्पाइनो–आर्मोनायड प्रकार का था। मगर यहां लोथल में ध्यान में रखने की बात यह है कि उक्त ढांचे बाद के हड़प्पाई काल के हैं

(शेष भाग... पृष्ठ 5 पर)

सम्पादकीय

दलित साहित्य : ब्राह्मणवाद के खिलाफ खुला विद्रोह

• डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर

'दलित' शब्द मूक नहीं है, यह अपनी परिभाषा स्वयं उद्‌भाषित करता है। दलित वह है जिसका दलन किया गया हो, 'शोषण' किया गया हो, उत्पीड़न किया गया हो। उपेक्षित, अपमानित, प्रताड़ित, बाधित और पीड़ित व्यक्ति भी 'दलित' की श्रेणी में आते हैं। इस तरह 'दलित' शब्द की परिभाषा के अन्तर्गत जहां सदियों से सामाजिक वर्णव्यवस्था और जातिवाद से अभिशप्त दलित, शोषित, उपेक्षित व उत्पीड़ित व्यक्ति आते हैं, वहीं सदियों से प्रताड़ित, उपेक्षित, अपमानित, शोषित, सामाजिक बन्धनों में बाधित नारी एवं बच्चे भी इस श्रेणी में शामिल हैं। भूमिहीन, अछूत, बन्धुआ, दास, गुलाम, दीन और पराश्रित, निराश्रित भी 'दलित' ही हैं।

'दलित' शब्द जहां व्यक्ति को अपनी अस्मिता, स्वाभिमान और अपने गौरवमयी इतिहास पर दृष्टिपात करने को बाध्य करता है, वहीं पर अवगति, वर्तमान स्थिति और तिरस्कृत जीवन के विषय में सोचने के लिए विवश करता है। हम कौन थे? क्या थे? क्या हो गये? आदि ऐसे प्रश्न हैं जिन्हें 'दलित' शब्द उत्तर पाने के लिए प्रेरित करता है। इस तरह इस 'दलित' शब्द का सम्बन्ध जहां सरस्वती और सिन्धु घाटी की सभ्यता, वहां के निवासी व मोहनजोदड़ों और हड़प्पा शहरों से जुड़ा है, वहीं उन विदेशी आक्रमणकारियों से जुड़ा है, जिन्होंने भारत की धन–सम्पदा के आकर्षण में इस सभ्यता के सृजन कर्ताओं को उजाड़ा, पराजित किया, उनकी संस्कृति, धर्म, साहित्य पर कब्जा किया, अपनाया और उन पर सामाजिक बन्धन थोपकर उन्हें 'गुलाम' बना दिया। शिक्षा ग्रहण करने, धन अर्जित करने और दूसरों से समानता करने के अधिकार पर सदैव के लिए प्रतिबन्ध लगा दिया। इसीलिए 'दलित' शब्द व्यक्ति को अपने गौरवमयी अतीत की तरफ झांकने के लिए प्रेरित करता है।

'दलित' शब्द सामाजिक असमानता की ओर भी इंगित करता है। एक जैसे डील–डोल वाले, एक जैसे रक्त वाले लोगों में परस्पर ऊंच–नीच, छोटे बड़े की भावना क्यों है? एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से छुआछूत क्यों करता है? मन्दिर में कुत्ता प्रवेश कर सकता हे, पर एक 'इंसान' मन्दिर में भगवान के दर्शन नहीं कर सकता, क्या कारण है? हम विदेशी, विधर्मी के साथ बैठकर खा सकते हैं रोटी–बेटी का रिश्ता कर सकते हैं, पर एक 'दलित' स्वधर्मी को पास बैठाने से हिचकिचाते हैं, आखिर क्यों?

'दलित' शब्द इतिहास के उस पहलू पर भी प्रकाश डालता है जिसके कारण हमारा देश भारत सैकड़ों वर्षों तक विदेशियों का गुलाम रहा। समाज के कुछ स्वार्थी

(शेष भाग... पृष्ठ 3 पर)

भारतीय दलित साहित्य अकादमी के प्रकाशन

विश्व धरातल पर दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अंधा समाज और बहरे लोग	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
सिन्धु घाटी बोल उठी	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अब नहीं रहेंगे हाशिये पर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर शतक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
विश्व विभूति डा. अम्बेडकर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
दलित लेखक परिचय ग्रंथ (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	250/–
बुद्धा दू अम्बेडकर (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	150/–
दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर दर्शन	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
हमारे संत और समाज सुधारक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
धर्म और समाज	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
आदिम जाति चमार (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	300/–
दलित उद्‌घोष	डा. सुमनाक्षर	100/–
दलित साहित्य की हुंकार–सात समन्दर पार	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
युगपुरुष बाबू जगजीवनराम	डॉ. सुमनाक्षर	200/–
प्राचीन आदिम जाति वाल्मीकि (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
मेरे साक्षात्कार–मेरा जीवन संघर्ष	डा. सुमनाक्षर	300/–
सभ्यता, संस्कृति, समाज और साहित्य	आचार्य गुरुप्रसाद	100/–
भारत रत्न डा. बी.आर. अम्बेडकर	राजमल 'राज'	100/–
मूल भारती से दलित	राजमल 'राज'	100/–
अम्बेडकरवाद बनाम सामाजिक परिवर्तन	राजमल 'राज'	100/–
दलित साहित्य–दशा और दिशा	डा. माता प्रसाद	200/–
दलित साहित्य से सामाजिक परिवर्तन	डा. माता प्रसाद	100/–
भारत की गुलामी के 22 सौ साल	प्रदीप कुमार मौर्य	250/–
बौद्ध धर्म–गया से अयोध्या तक	प्रदीप कुमार मौर्य	120/–
गांधी, अम्बेडकर और दलित	प्रदीप कुमार मौर्य	100/–
हम एक हैं	डा. माता प्रसाद	100/–
रैदास से संत शिरोमणि गुरु रविदास	डा. माता प्रसाद	100/–
ताकि सनद रहे	डा. सुमनाक्षर	200/–
Who's who Dalit Writers in India	Dr. Sumanakshar	500/-
Who's Who–International & National Awardees of B.D.S.A.	Dr. Sumanakshar	500/-

पुस्तक मंगाने के लिए अग्रिम राशि निम्नलिखित अकादमी के खाते में भेजें

Bharatiya Dalit Sahitya Akademi
A/c No. - 2592101012292 (Canara Bank)
IFSC - CNRB0002592
Branch - Model Town, Delhi

सम्पादकीय का शेष....दलित साहित्य : ब्राह्मणवाद के खिलाफ खुला विद्रोह

लोगों ने अपने जात्याभिमान और अहं के कारण समाज की असली रीढ़—श्रमजीवी और शिल्पकार वर्ग को राष्ट्र की मुख्य धारा से काटकर रख दिया, जिस कारण से क्षत्रियों की शूर वीरता कमजोर पड़ गई, और वे विदेशियों के सामने परास्त होते चले गये। अगर दलितों का सही मूल्यांकन किया होता, उनकी वास्तविक शक्ति का सदुपयोग होता तो भारत कभी विदेशियों का गुलाम नहीं बनता, पर दुःख इस बात का है कि यहां के तथाकथित उच्च वर्ग ने विदेशियों की दासता सहज ही कबूल कर ली, पर 'दास' बनाए अपने भाइयों को गले लगाना अपनी इज्जत के खिलाफ समझा।

'दलित' शब्द आज 'प्रेरणा' और 'विद्रोह' का पर्यायवाची भी है। दलितों को जहां वह उनके गौरवमयी अतीत को दर्शाता है, वहीं वह उन्हें सामाजिक आजादी, समानता और सम्मान के लिए प्रेरित करता है। वह उन शक्तियों के विरुद्ध खुला विद्रोह करने की भी प्रेरणा देता है जिन्होंने झूठे सामाजिक नियमों में बांधकर न केवल उनकी 'विवेक शक्ति' को ही नक्कारा बना दिया, बल्कि उनकी सोच को भी सदैव के लिए गुलाम बनाकर रखा।

इस तरह आज 'दलित' शब्द स्वयं उन बेजुबानों की आवाज है जिनकी जुबान 'वेद मंत्र' दोहराने पर काट दी गई, उन लोगों की श्रवण शक्ति है जिनके कानों में 'वेदमंत्र' सुनने पर उबलता हुआ शीशा उड़ेल दिया गया, उन लोगों के हाथ हैं जिन्हें समानता के अधिकार मांगने के अपराध में काट दिया गया और उन लोगों के पांव हैं जिन्हें न्याय की याचना करने के लिए बढ़ने पर कलम कर दिया गया।

'दलित' शब्द आक्रोश, चीख, वेदना, पीड़ा, चुभन, घुटन, छटपहाट का प्रतीक है। यह उन लोगों की ओर संकेत करता है जो अमानुषिक सामाजिक व्यवस्थाओं में बंधे, अन्यों की प्रताड़ना सहते चीखते—चिल्लाते रहे, पर उनकी वेदना, पीड़ा, चुभन, घुटन और छटपटाहट को अनदेखा कर मनुस्मृति की जालिम न्याय प्रणाली की दुहाई देकर उल्टे उनके रिसते घावों पर नमक मिर्च छिड़का गया। वह और छटपटाए, पर धीरे—धीरे भाग्य, भगवान और विधि का विधान मानकर वे कुंठित होकर बैठ गये। यह उन लोगों का प्रतिनिधि है जो सदियों से बंधुआ बने नरकीय जीवन जीते रहे, खून के आंसू पी बेबसी में बेगार करते रहे, मां—बेटियों की अस्मिता से खिलवाड़ करते देखकर भी आक्रोश को रोके रहे। हर क्षण कदम—कदम पर अत्याचार, अपमान, तिरस्कार सहते हुए सब्र का घूंट पीते रहे।

इस तरह 'दलित' शब्द एक इतिहास है, सामाजिक दर्पण है, सर्वहाराओं का चीत्कार है, अस्मत, अस्मिता, असमानता और अनाचार विवेचक है। यह शोषकों, दुराचारियों, अन्यायियों के कुकर्मों का पर्दाफांस करके जहां दलितों, पीड़ितों, दासों और पराधीनों को इनसे स्वतन्त्र होने का आह्वान करता है, वहीं उन्हें समता और सम्मान के साथ सुखी और समृद्ध जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है। इस तरह 'दलित' शब्द सच्चा पथ प्रदर्शक ही नहीं, अपितु सच्चा नेता है जो अवनति से प्रगति की ओर ले जाता है और निर्जीवों में संजीवनी फूंकता है।

दलित साहित्य

'दलित' शब्द जब साहित्य के साथ मिल जाता है तो साहित्य को विशिष्ठता प्रदान करता है, विशेष अर्थ गौरव से सुशोभित करता है। ऐसे साहित्य को एक पृथक धारा प्रदान करता है। एक नई पहचान से परिचित कराता है। साहित्य के साथ 'दलित' शब्द मिलकर वह 15 प्रतिशत लोगों का प्रतिनिधि नहीं रहता, अपितु धरती से जुड़े 85 प्रतिशत लोगों का प्रतिनिधि 'दलित साहित्य' कहलाता है।

'दलित साहित्य'—दलितोत्थान साहित्य यानि वह साहित्य जो दलितों, पीड़ितों, शोषितों, उपेक्षितों और असहाय वर्ग के उत्थान और नव विकास के लिए प्रेरित करता है, जो ऐसे व्यक्तियों को उनके गौरवमयी इतिहास से परिचित कराते हुए उनको उनकी मानवीयता की पहचान से अवगत कराता है। यह वह साहित्य है जो धरती से जुड़े लोगों को उनकी समस्या और दुर्दशा से अवगत कराते हुए उन्हें निराकरण और समाधान के उपाय बताता है।

'दलित साहित्य' एक ऐसा साहित्य है जो सभी तरह की वर्ण—व्यवस्था, जात—पांत, ऊंच—नीच, भेदभाव के दायरे से ऊपर है और जिसे धर्म, भाषा और प्रदेश की सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता। यह समाज के सर्वहारा वर्ग के समान निश्चल और सरल है। इसे अपने उद्देश्य पूर्ति के लिए किसी छंद, अलंकार आदि की आवश्यकता नहीं। दलन की वेदना, शोषण की कुढ़न, अन्याय का उत्पीड़न और अत्याचार का रुदन, अपमान की पीड़ा अभिव्यक्ति भाषा और अलंकार नहीं देखती।

'दलित साहित्य' पुनर्जन्म, भाग्य, धर्म, कर्म के सिद्धान्त को नक्कारता है और व्यक्ति को साधना, आस्था और चिन्तन के प्रति उन्मुख करता है। यह वह साहित्य है जो एक स्वस्थ, उचित लक्ष्य की ओर मानव समाज में समृद्धि भाव उत्पन्न करता है। यह इंसान को इंसान से तोड़ता नहीं, जोड़ता है। वह इंसान में इंसान के प्रति भेदभाव, तिरस्कार, अलगाव, घृणा पैदा नहीं करता। अपितु उनमें मानव प्रेम, सहिष्णुता, भ्रातृ—भाव पैदा करता है। मानव जीवन में समरसता और समव्यता लाता है।

'दलित साहित्य' इन्सानियत भेदभाव, छुआछूत, घृणा, नारी शोषण, बंधुआ जीवन, धार्मिक कठ मुल्लापन, कर्मकांड, रूढ़िवाद और ब्राह्मणवाद के खिलाफ खुला विद्रोह है। जो इन्सानियत प्रेमी है, उनकी

यह प्रशंसा करता है, जो दलितोत्थान में जुड़े हैं, उनको फूल चढ़ाता हैं, जो मानव अधिकारों के लिए जूझ रहे हैं, उनका सम्मान करता है और जो दासता और शोषण से मुक्ति दिलाते हैं, उनकी आराधना करता है।

सप्रसिद्ध दलित साहित्यकार बाबूराम बागुल दलित साहित्य को क्रान्तिकारी युग का सारथी बताते हुए कहते हैं–''जब साहित्य का सामान्य जन के साथ शूद्र–अतिशूद्र के साथ सम्बद्ध होता है, तब वह सम्यक परिवर्तन का अर्थात आर्थिक, राजकीय, सामाजिक, सांस्कृतिक और मानसिक परिवर्तन का पक्षधर बन जाता है, इसी पक्षधरता को 'दलित साहित्य' ने भी स्पष्ट रूप से पहचाना है। वह भी इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि शोषण–सत्ता ने सदैव अपने अनुकूल प्रथाओं, व्यवस्थाओं, धारणाओं और व्याख्याओं को जीवंत बनाये रखने की चेष्टा की है तथा उसने प्रतिकूल पड़ने वाली प्रथाओं आदि को नष्ट किया है। इसलिए 'दलित साहित्य' हिन्दू पौराणिकता, वैचारिकता, मानसिकता, संस्कार, आदर्शों, धारणाओं, प्रतीकों और उनकी प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष परिणतियों को नकारता है और व्यापक स्तर पर हर 'समान्तर' की तरह हर तरह के शोषण का विरोध करता है।''

सुप्रसिद्ध दलित साहित्यकार ओम प्रकाश वाल्मीकि दलित साहित्य को एक सशक्त क्रान्ति मानते हुए कहते हैं–''दलित साहित्य सिर्फ एक दलित, अछूत या शूद्र का साहित्य नहीं है। दलित साहित्य अपने आप में बेहद व्यापक अर्थ रखता है। 'दलित' शब्द के भीतर छिपा गूढ़ अर्थ जिस भाव की व्याख्या करता है, वह एक पहचान है, उन लोगों की जो सदियों से दबे–कुचले, प्रताड़ित, उपेक्षित लोग हैं, जिन्होंने जीवन के हर क्षेत्र में अपनी रचनात्मकता, दृढ़ता और मौलिकता सिद्ध की है। इस देश के निर्माण में अपना जीवन स्वाहा किया है किन्तु सत्ता और उसके इर्द–गिर्द बिखरे स्वार्थी तत्वों ने उन्हें कभी भी स्वीकार नहीं किया।''

सुप्रसिद्ध दलित साहित्यकार रमेशचन्द्र परमार दलित साहित्य को भारतीय साहित्य की एक विरल घटना बताते हुए कहते हैं–''आजादी के बाद भारतीय साहित्य के आकाश में कोई महत्वपूर्ण विरल घटना है तो यह है दलित साहित्य। 1960 के दशक से लगाकर दलित साहित्यकारों ने अपने सृजन का अम्बार खड़ा कर दिया है। दलित साहित्य की अपूर्व घटना है और भारतीय साहित्य लम्बे अरसे तक असरकारक धारा के रूप में आकर्षण का केन्द्र बनाने वाली वास्तविकता है। आज चर्चा का विषय है दलित साहित्य के पक्ष में जितनी सबल, तर्कबद्ध दलील की जाती हैं उतनी ही उग्रता से उसके विपक्ष में परम्पराबादी खेमों से प्रतिवाद भी किया जाता है।

प्रसिद्ध साहित्यकार का. रा. वालदेकर भारत में जन्मे दलित साहित्य को एक विश्वव्यापी आन्दोलन मानते हुए कहते हैं–''दलित साहित्य का आन्दोलन आज के भारतीय साहित्य सृष्टि का एक बहुचर्चित आन्दोलन है। इस आन्दोलन की चर्चा आज केवल भारतीय साहित्यिक जगत से ही नहीं, विश्व स्तर पर हो रही है। आधुनिक भारत का कोई भी साहित्यिक आन्दोलन इससे पूर्व भारत की सीमाएं लांघ ही नहीं पाया था क्योंकि वे विदेशों में शुरू हुए साहित्यिक आन्दोलन का अनुकरण मात्र रहे। लेकिन 'दलित साहित्य' का आन्दोलन यहां की मिट्टी में उपजा वह भारत के सदियों से शोषित–पीड़ित मानव के आक्रोश, भाव–भावना, विद्रोह स्वर और संघर्ष की रणभेरी के साथ उभरा।

बाबा साहब डा. भीमराव अम्बेडकर का जीवन संघर्ष, उनके दलित मुक्ति के आन्दोलन और दर्शन इस आन्दालेन के प्रेरणास्रोत और दिशा–दिग्दर्शक बने। ऐसा ज्वालामुखी फूट पड़ा कि 'स्वान्त सुखाय' लिखने वाले कलावादी भारतीय साहित्य की आंखें चौंधिया गईं। भारत का यह एकमात्र साहित्यिक आन्दोलन है जो पूर्व के जापान से लेकर अमेरिका और रूस के साहित्यकारों के अध्ययन का विषय बन गया है।

दलित साहित्य सामाजिक विषमता और इंसानी भेदभाव के खिलाफ आवाज बुलन्द करने वाला खुला विद्रोह है जिसके केन्द्र में मानवीय समता और सम्मान है। दलितों की यह सामाजिक समता और सम्मान की लड़ाई आर्यों–अनार्यों के 'देवासुर संग्राम' के रूप में पूर्व वैदिक काल से चली आ रही है। बाद में ऋग्वेद में इसे 'दशराज युद्ध' के रूप में दर्शाया गया जिसमें आर्य ब्राह्मणों की सर्वत्र महत्ता का बखान किया गया है।

इसीलिए महान दार्शनिक चार्वाक ने वेदों के निर्माताओं को भांड, धूर्त और निशाचर कहा।

त्रयो वेदा कर्त्तारः–
भाण्ड, धूर्त, निशाचरः।

भगवान बुद्ध ने भी वेदों की महत्ता को नकारते हुए कहा–

'अत्तो दीपो भवः'।

ब्राह्मणों की सर्वोच्चता को नकारते हुए उन्होंने कहा–

न जच्चा वसलो होति,
न जच्चा होति ब्राह्मणो।
कम्युना वसलो होति,
कम्युना होति ब्राह्मणो।।

(न जन्म से कोई व्यक्ति नीच होता है, न जन्म से ब्राह्मण। कर्म अनुसार व्यक्ति नीच होता है। कर्म अनुसार ही ब्राह्मण होता है।)

संत शिरोमणि गुरु रविदास जी ने भी वर्ण व्यवस्था के पोषक वेदों को नकारते हुए खुलेआम कहा है :

जे नर करे वेद खंडोति।
दास रविदास करे दंडोति।।

आज दलित साहित्य ब्राह्मणवाद और उस द्वारा स्थापित वर्ण व्यवस्था के खिलाफ खुला विद्रोह है जो भारतीय संविधान प्रदत्त स्वतंत्रता, समता और भ्रातृभाव के साथ हर इंसान को न्याय, समता, सुरक्षा, सम्मान, दिलाने के लिए न केवल भारत तक ही, बल्कि समूचे विश्व में अपने समता–सम्मान स्वतंत्रता की पताका फहरा रहा है। •

पृष्ठ 1 का शेष...दलितों का गौरवशाली इतिहास : षड्यंत्रपूर्वक मिटाया गया

यानि 1600 ई.पू. के जब कि हड़प्पा सभ्यता के अन्त का काल लगभग २०० ई.पू. माना जाता है अर्थात लोथल में प्राप्त उक्त ढांचे उस काल के हैं जबकि आक्रमणकारी भारत में आ चुके थे तथा सारे पश्चिमोत्तर भारत में फैल चुके थे। चार ढांचों के आर्य प्रकार के होने का यही कारण था। यही वह स्थान है जहां पर इतिहासकार ने जानबूझकर तथ्यों को आंखों से ओझल किया है। स्पष्ट है एक दो उदाहरणों को छोड़कर शेष सारी आबादी आस्ट्रोलायड तथा सुमेरियन प्रकार के यानि द्रविड़ लोगों की थी।

अब बाद के इतिहास पर विचार करते हैं। मगध का वह क्षेत्र था जहां पुरोतिहासिक तथा ऐतिहासिक युग में भी संभ्रांत अनार्य राजाओं ने राज किया, जिन्हें इन ग्रन्थों में 'राक्षस' कहा है। 'राक्षस' शब्द का अर्थ रक्षा में समर्थ व्यक्ति यानि महाबलि होता है। बाद के युग में इसका अर्थ बिगड़ कर कुछ से कुछ और हो गया है। जिन्होंने आर्यों की गुलामी स्वीकार कर ली, उन सभी अनार्य लोगों को शूद्र घोषित कर दिया जिन्होंने अपने बाहुबल पर उन्हें ललकारा उन्हें 'राक्षस' कह दिया। ऐतिहासिक युग में सर्वप्रथम इतिहास प्रसिद्ध अनार्य शिशुनाग वंश ने भी यहीं पर राज किया! इस वंश के प्रमुख राजा बिम्बसार और आजाद शत्रु थे जो बहुत ही योग्य थे।

शिशुनाग वंश के बाद मगध में नन्द वंश के राजाओं की राजसत्ता रही थी। ये निश्चय ही नापित (नाई) जाति के लोग थे और ब्राह्मण तथा क्षत्रियों के घोर विरोधी थे। नन्दों ने अपने युग के उत्तरमध्य भारत के लगभग सभी क्षत्रिय राजाओं का विनाश करके रख दिया। इसी कारण महापदमनन्द को पुराणों में दूसरा परशुराम कहा है। उनकी सैनिक शक्ति भी इस युग के समस्त राजाओं में सर्वाधिक थी इतनी विशाल कि उसकी ठीक संख्या का पता विश्वविजेता सिकन्दर महान को जब लगा तो वह भयभीत होकर सीमाक्षेत्र से ही भाग खड़ा हुआ। ब्राह्मण विरोधी होने के कारण इस राजपरिवार के इतिहास में सर्वाधिक हेरा फेरी हुई है। बी. ए. सिमथ ने कहा है कि 12वीं सदी के महाकवि चन्द्र को जब पता लगा कि नन्द शूद्र थे तथा ब्राह्मणों के घोर विरोधी थे तो उन्होंने इस राज परिवार को ऐतिहासिक कालक्रम में से ही निकाल फेंका यानि उन महोदय ने संवत सन में से इस राज परिवार के राजकाल के 90 वर्ष निकाल कर (संवत–90) आनन्द संवत नाम से एक नया संवत चलाया अर्थात उस राज परिवार को जड़मूल से ही मिटाने का हर संभव प्रयत्न किया। मगर उस बेचारे को क्या मालूम था कि अभी भी न जाने कितने साहित्यक लेख अवशेष हैं जिन्हें बीसवीं सदी के खोजकर्त्ता इतिहासकार ढूंढ़ निकालेंगे और इतिहास निर्मित कर उस राज परिवार को पुनर्जीवित कर देंगे। इतना ही नहीं, उस युग में तथा उसके बाद के काल में लिखे गये ऐतिहासिक मूल्य के सभी ग्रन्थों (पुराणों) में जहां भी उस राजपरिवार का वर्णन था उसे मिटा दिया गया। यही कारण है कि उक्त ग्रन्थों में कहीं पर इस राज परिवार की वंशावली का इतिहास नहीं मिलता। केवल मात्र पन्नों में ही हेर फेर नहीं किया गया बल्कि समूहों ग्रन्थों को ही समूल नष्ट कर दिया गया।

महाराजा समुद्रगुप्त द्वारा लिखित महाकाव्य कृष्ण चरित्र के प्रथम तीन श्लोकों में वर्णन है कि युग वंश कालीन महाभाष्यकार पतंजलि में महानन्द नाम से एक महाकाव्य की रचना की थी जिसमें नन्द राज्य–परिवार का सविस्तार वर्णन था। मगर आज उस ग्रन्थ का नाम ही शेष बचा है और मूल रचना को समूल नष्ट कर दिया गया है।

अब मौर्य राज परिवार को लेते हैं। यह परिवार निश्चय ही नन्दों की सन्तान था। पुराणों के एक भाष्यकार धुन्धी राजा ने चन्द्रगुप्त को अन्तिम नन्दराजा की मुरा नाम की शुद्र पत्नी का पुत्र बतलाया है। वास्तव में पुराणों में भी इस राज परिवार के बारे में वही हुआ है जो नन्दों के बारे में, यानि अगर कहीं कुछ लिखा गया तो उसे मिटा दिया गया। केवल साहित्यिक रचनायें ही उनकी कुदृष्टि से बच पाई जिसमें से मुख्य सुप्रसिद्ध रचना 'विशाखादत्त' का संस्कृत नाटक 'मुद्रा राक्षस' है। उक्त नाटक में स्पष्टतः चार बार वर्णन आया है कि चन्द्रगुप्त नन्दों की संतान था, अगर इस युग के कुछ प्रसिद्ध इतिहासकारों जिनमें आर.के. मुखर्जी मुख्य हैं, ने अपनी ऐतिहासिक रचनाओं में इन प्रमाणों को जानबूझकर आंखों से ओझल कर दिया है और उसके स्थान पर केवल दो शब्दों 'वृषल' तथा 'कुलहीना' को लेकर ही वाद–विवाद किया है। वास्तव में उक्त शब्दों से नाटक में चन्द्रगुप्त को बार–बार सम्बोधित किया गया है जबकि 'वृषल' शब्द का अर्थ स्पष्ट तथा राजाओं में वृष (सांड) है अतः इस शब्द को लेकर वाद विवाद करने की आवश्यकता ही न थी मगर फिर भी किया गया है ताकि परिणाम उलट निकाले जा सकें।

अब हम मगध के गुप्त परिवार को लेते हैं। इस परिवार के जाति सम्बन्धी निर्णय के लिए ऐतिहासिक मूल्य के धार्मिक ग्रन्थों में कोई लेख नहीं मिलते। मौर्यो की तरह ही इस परिवार के बारे में ऐसा कोई निर्णय लेने के लिए साहित्यक रचनाओं का ही सहारा लेना पड़ता है। वह मुख्य रचना संस्कृत भाषा या नाटक 'कौमुदी महोत्सव' है जिसमें चन्द्रगुप्त प्रथम को चन्द्रसेन कहा है और उसे कारस्कर जाति का बतलाया गया है व शूद्र कहा है। इसी नाटक में कहा है कि मगध के राजा सुन्दर वर्मन के विरूद्ध युद्ध में उसने लिच्छिवियों से सम्बन्ध स्थापित

किये। सम्भवतः पहले वैवाहिक फिर राजनैतिक। इसकी पुष्टि उसके प्रचलित सिक्कों से हो जाती है। जिनमें से एक में राजकुमार चन्द्रगुप्त को लिच्छिवि राजकुमारी कुमार देवी को अंगूठी पहनाते हुए प्रदर्शित किया गया है। लिच्छिवि राजपरिवार अनार्य था। उनमें प्रचलित प्रथाओं के अनुसार राजकुमारियों की शादी बाहर की जातियों में निषिद्ध थी। अतः कहा जा सकता है कि गुप्त राजपरिवार भी अनार्थ था। नेपाल के इतिहास में उन्हें ग्वाले कहा है।

उक्त तथ्य बचे कुचे उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर ही सम्मुख आए हैं। अन्यथा कहा जा सकता है हजारों साल के अतीत के धुधलके में शूदों के इतिहास पर न जाने कितनी लीपा पोती की गई है। पन्नों में कितना हेर फेर हुआ है, न जाने कितनी रचनाओं को समूल नष्ट किया। आज भी वह सिलसिला जारी है। अगर भारत के इतिहास को रचने में अंग्रेजों का हाथ न होता तो आज तस्वीर का पहलू ही भिन्न होता।

मैं खोज के उपरान्त को कुछ तथ्य अपने शोध ग्रन्थ 'सिन्धु घाटी सभ्यता के सृजनकर्ता शुद्र न वणिक' (अनुसंधान प्रकाशन–518, सीतानगर लुधियान पू. 301) ने रख सका हूं। उसके प्रमाण ही मूल रूप में नष्ट हुए होते और शूद्रों के इतिहास के नाम पर केवल निपट अंधेरा ही अवशेष बचता और आज इससे अधिक कभी न सोच पाते कि भगवान ने उन्हें केवल द्विजों की सेवा के लिए ही पैदा किया है, पता ही न चल पाता कि वे दुनिया की तीन प्राचीनतम महान सभ्यताओं में से एक सिन्धु घाटी को जन्म देने वालों के महान बेटे हैं तथा बड़े भाइयों (आर्यों) के शिकंजों में फंस कर क्या से क्या हो गये हैं।

ऊपर दिये गये विचारों का समर्थन निम्न इतिहासकार व प्रोफेसरों की उस खीझ से होता है जो उन्होंने उक्त विषय पर हुई भेंटवार्ता में प्रकट की। दिल्ली के जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर व इतिहासकार रोमिला थापर से भेंट हुई तो वे झुंझलाकर बोली–''मिस्टर वियोगी, इस विषय पर खोज करना व्यर्थ होगा, कारण इसके लिए कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं।'' मगर अब जबकि शोध कार्य पूरा होने के बाद प्रकाशित भी हो चुका है तो उनके झूठ की कलई खुल गई है। ऐसी ही भेंट में पंजाब विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास व पुरातत्व विभाग के प्रो. बी.सी. पाण्डेय उत्तर देते हुए बोले, ''क्योंकि सिन्धु घाटी सभ्यता की तह (चमकीले लाल रंग की कुम्भकला) की पर्त पाई गई है अतः दूसरी को पहली के विनाश के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता यानी कि आर्यों के सिन्धु घाटी सभ्यता का विनाश नहीं किया। मगर जिसे पांडे महोदय आर्यों की सभ्यता बता रहे हैं, वह निश्चित रूप से कौरवों की सभ्यता थी जो सीस्तान से चलकर यहां 1100–1000 ई.पू. में आये थे। आर्य भाषी इरानी थे। अत' पांडे महोदय का उक्त कथन असत्य प्रमाणित हो जाता है।

इसी प्रकार भारत सरकार के पुरातत्वीय सर्वेक्षण विभाग के डायरेक्टर जनरल थापर से भेंट में बात हुई तो बड़े निर्लज्ज भाव में बोले–साहब, अभी तक इस विभाग को सिन्धु घाटी सभ्यता के शहरों की खुदाई में ऐसी कोई ईंट प्राप्त नहीं हुई जिस पर लिखा हो कि इस सभ्यता के जन्मदाता शूद्र थे।

स्पष्ट है कि सभी विश्व–विद्यालयों में अधिकार जमाये बैठे प्रोफेसर तथा इतिहासकार तथा पुरातत्वीय सर्वेक्षण विभाग के अधिकारी शूद्रों के घोर विरोधी हैं। उनमें से किसी से न्याय की आशा करना व्यर्थ है। उस के लिए स्वयं ही आगे बढ़कर विश्वविद्यालय के इतिहास विभागों पर अधिकार जमाना होगा। मेरा यही आह्वान है। •

डॉ. अम्बेडकर और मानवाधिकार

• डॉ. सुशील कुमार बैरवा

डॉ. अम्बेडकर भविष्यद्रष्टा थे। उन्होंने 1954 में पंडित नेहरू को सचेत कर दिया था कि चीन विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि जो लोग हमला करने के आदी हैं, वे जरूर घात लगाने की टोह में रहेंगे और अवसर का लाभ उठाने में कभी चूक नहीं करेंगे। डॉ. अम्बेडकर बिखरे हुए समाज को एकसूत्र में बांधना चाहते थे, लेकिन पंडित नेहरू की व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं को देखकर उन्हें मार्गदर्शन भी देना चाहते थे।

भारत में मानवाधिकारों का इतिहास लम्बा और उतार–चढ़ाव का रहा है। वास्तव में भारतीयों को नागरिक अधिकार प्राप्त नहीं थे। हमारी संस्कृति और परम्परा ऐसी रही है जहां 'सती–प्रथा', 'बाल– विवाह', 'बहुविवाह प्रथा' आदि कुरीतियां प्रचलित थीं और जाति प्रथा, अस्पृश्यता जैसी बुराइयां आमतौर पर व्याप्त थीं। गुलामों का व्यापार होता था।

डॉ. अम्बेडकर 'आधुनिक मनु' भी थे। वे हिन्दू धर्म की सामाजिक व्यवस्था का उद्धार करना चाहते थे। डॉ. अम्बेडकर परम्पराओं को तोड़कर समतावादी समाज की स्थापना करना चाहते थे। वे चाहते थे कि हिन्दू अपनी जाति–व्यवस्था पर सोचें और उसमें आवश्यक सुधार करने के लिए स्वस्थ मन से तैयार हो। लेकिन डॉ. अम्बेडकर की एक भी नहीं चली।

डॉ. अम्बेडकर ने अपने दर्शन में हिन्दू धर्म का विरोध अवश्य किया है, लेकिन उन्होंने मानवता को या मानवतावादी दर्शन को सहर्ष गले लगाया। डॉ. अम्बेडकर ने अछूतों के कल्याण के लिए मानवतावादी स्वरूप को अपनाया है। डॉ. अम्बेडकर अछूतों के साथ–साथ सम्पूर्ण मानव की भलाई करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने समतावादी एवं मानवतावादी समाज की कल्पना की। डॉ. अम्बेडकर ने मानवाधिकारों से वंचित लोगों को मानवाधिकार सुलभ कराने के लिए भरसक प्रयास किए। समाज के वंचित, हाशिए पर रहने वाले लोगों को स्वतंत्रता और समानता युक्त जीवन देने के लिए डॉ. अम्बेडकर सदैव प्रयासरत रहे। महिलाओं के प्रसूति अवकाश, मजदूरों के लिए काम के घण्टे

निर्धारित कराने, अछूत वर्ग को समानता का अधिकार दिलाने, उन्हें मंदिरों में प्रवेश कराने सहित ऐसे अनेक कार्य किए, जिनके बल पर उनके व्यक्तित्व का निर्माण हुआ। 'हिन्दू कोड बिल' हिन्दू– समाज में वर्षों से छाई मलिनता और अयोग्यताओं को खत्म करने का कानून था, जो तत्कालीन कट्टर हिन्दू सांसद, धर्मावलम्बियों के कारण संसद में पारित नहीं हो सका। इससे दुखी होकर डॉ. अम्बेडकर ने देश के प्रथम कानून मंत्री के पद से त्यागपत्र दे दिया था। हालांकि यह भी एक सच्चाई है कि डॉ. अम्बेडकर द्वारा निर्मित हिन्दू कोड बिल टुकड़ों में पारित हुआ, जिससे यह माना जा सकता है कि डॉ. अम्बेडकर को भारतीय सभ्यता और संस्कृति की कितनी अधिक समझ थी और उसमें छाए विकार और विकृतियों को वो दूर करना चाहते थे। 'हिन्दू कोड बिल' के माध्यम से वे हिन्दू–समाज में भी विवाह, तलाक, विवाह–विच्छेद पिता की सम्पत्ति में पुत्री का हिस्सा सहित अन्य नियम बनाना चाहते थे। उन्होंने अपने जीवनकाल में वंचितों को समाज की मुख्यधारा में लाने के लिए अनेक मोर्चे पर संघर्ष किया। समाज के वंचित वर्गों को मानवाधिकार सुलभ कराने के लिए उन्होंने दो प्रकार से कार्य किए। पहला स्वयं संघर्ष करके, अंग्रेजों पर दबाव बनाकर, सत्याग्रह या समझाइश का रास्ता अपनाकर कट्टरपंथियों के लिए हृदय परिवर्तन करके वंचितों के हितों को रक्षा की। दूसरा आजादी के बाद भारतीय संविधान के प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में संविधान की प्रस्तावना में सामाजिक, राजनीतिक समानता का उल्लेख कराया जो संविधान की आत्मा मानी जाती हैं।

सहस्राब्दि पुरुष के रूप में सम्मान प्राप्त महात्मा गांधी मानवाधिकार का हनन रोकने वाले अग्रणी नेता माने जाते हैं। शुरू में दक्षिण अफ्रीका में और बाद में भारत में उन्होंने ऐसे करोड़ों लोगों के लिए नए युग का सूत्रपात किया जो बुनियादी मानवाधिकारों से वंचित थे। इस तरह गांधी जी ने शोषित मानवता की आवाज बुलंद करने के लिए एक संगठित आंदोलन शुरू किया। उन्होंने लोगों का आह्वान किया कि वे अपने अधिकारों को पाने के लिए निर्भय होकर बहादुरी के साथ संघर्ष करें।

डॉ. अम्बेडकर ने अपनी सामाजिक न्याय की धारणा के अनुरूप, उन सामाजिक न्याय के सिद्धांतों को स्वीकार नहीं किया, जिन्हें उन्होंने वर्ण–व्यवस्था, प्लेटो की स्कीम, अरस्तू के चिन्तन, नीत्शे के विचार, दैविक–कानून, मध्यकालीन दृष्टिकोण, मार्क्सवादी सर्वहारा समाजवाद और गांधी के सर्वोदय समाज में अन्तर्निहित पाया।

इन सुपरिचित सिद्धांतों को डॉ. अम्बेडकर ने क्यों नहीं माना? क्या ये सिद्धांत पददलित, कमजोर और पिछड़े वर्गों के हित में नहीं थे? ये कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न हैं, जिनके उत्तर यहां डॉ. अम्बेडकर के दृष्टिकोण से प्रस्तुत हैं। डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि वर्ण–व्यवस्था में स्वतंत्रता, समता और भ्रातृत्व के आदर्शों के लिए कोई स्थान नहीं है। उसमें सामाजिक–असमानता का पोषण और मानव व्यक्तित्व की गरिमा का पतन होता है। उसमें उन लोगों – विशेषकर शूद्र दलितों की आर्थिक सुरक्षा का कोई प्रबंध नहीं है, जो ब्राह्मण–वर्ग से निम्नस्तर पर आते हैं। इसलिए डॉ. अम्बेडकर ने वर्णाश्रम धर्म के सम्पूर्ण सामाजिक–अन्याय के संरचनात्मक एवं कार्यात्मक ढांचे को अस्वीकृत कर दिया और कहा कि सामाजिक न्याय का जो सार–तत्व है, वर्णाश्रम धर्म उसका प्रतिरोधी है। इन्हीं कारणों से जैसा कि डॉ. अम्बेडकर ने सोचा, प्लेटो की स्कीम असफल रही, उससे सार्वजनिक वर्गीकरण तो नितांत बनावटी सिद्ध हुआ। मानव स्वभाव के रहस्यों को प्लेटो समझने में असमर्थ रहा। इस प्रकार वर्गाधारित सामाजिक न्याय की धारणाओं को निश्चित करने में, वर्ण तथा प्लेटो, दोनों ने 'सामाजिक असमानता' या 'भेदभाव' को अन्तर्निहित कर दिया। श्रेष्ठ वर्ग के अलावा अन्य वर्गों के लोगों पर अनेक सीमाएं एवं निर्योग्यताएं थोप दीं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि डॉ. अम्बेडकर ने मानवधिकार से वंचित लोगों को मानवाधिकार सुलभ कराने के लिए भरसक प्रयास किए। उनकी भूमिका देश में कुछ भी रही हो, वे गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी के सदस्य हो, या बम्बई विधान परिषद् के श्रम मंत्री या फिर भारतीय संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप रहे हों, उन्होंने हर जगह मानवाधिकार युक्त समाज निर्माण की बात कही। उनके जीवन का चिंतन समाज के आखिरी व्यक्ति को लाभ या उसके जीवन में सुधार करने वाला होता था। वे समाज के पीड़ित, प्रताड़ित, वंचित, उपेक्षित, स्त्री, मजदूर और शोषित वर्ग के हितैषी रहे। उन्होंने समाज के कमजोर वर्गों को आह्वान करते हुए कहा कि 'बलि हमेशा बकरे की दी जाती है, इसलिए शेर बनो, शेर की कभी भी बलि नहीं दी जाती।'

इसी प्रकार डॉ. अम्बेडकर ने जिस तरह विभिन्न सामाजिक उद्देश्यों जैसे – अस्पृश्यता उन्मूलन और मंदिरों में हरिजनों के प्रवेश के लिए राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व किया, यह निश्चय ही आधुनिक भारत में मानवाधिकारों के इतिहास में महत्त्वपूर्ण मील का पत्थर है।

मानवाधिकार के लिए आंदोलन के संदर्भ में भारत की समृद्ध विरासत रही है, किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति और मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा के वर्षों बाद भी डॉ. अम्बेडकर के देश में विभिन्न रूपों में मानवाधिकारों का उल्लंघन जारी है।

सत्य एवं प्रेम पर आधारित एक अहिंसक ष्टिकोण से रोजमर्रा की हमारी अनेक समस्याओं का समाधान हो सकता है और प्रत्येक व्यक्ति को बुनियादी मानवाधिकार सुनिश्चित किए जा सकते हैं, आवश्यकता सभी स्तरों पर प्रतिबद्धता और ईमानदारी की है।

हालांकि देश ने हर क्षेत्र में तरक्की की है। लेकिन जब तक हम शिक्षा को बढ़ावा और बेरोजगारी एवं कुरीतियों को दूर कर मान–सिकता में बदलाव नहीं लायेंगे, तक तक पूर्ण विकास नहीं हो पायेगा।•

सत्ता परिवर्तन के लिए दलित एकजुटता जरूरी

''न मिथ्याहं वंद राम
देवलोक जिणीपयां।
शुद्रमा विद्धि काकुत्स्थ
शाम्बूके नाम नामतः।।
भाशतस्तस्य भाद्रस्य
खगं सुरूपिर प्रभूः।
निकश्ष्यकोशत विमलं
शिरशिचक्छैद राघवः।।''

(बाल्मीकि रामायण, उत्तराखण्ड, 7-76-2 एवं 4)

रामायण में शम्बूक ऋषि एक शूद्र जाति का था। वह जानता था कि बिना विद्या के कोई आगे नहीं बढ़ सकता है। वह जंगल में तपस्या करता था और अपने समाज के लोगों को बुलाकर शिक्षा देता था। जब यह खबर ब्राह्मणों को लगी कि शूद्र होकर शम्बूक तपस्या कर रहा है तो इसकी शिकायत राजा रामचंद्र से की। रामचंद्र ने ब्राह्मणों के कहने से जंगल में खोजकर शूद्र शम्बूक ऋषि की गर्दन तलवार से काट दी। शम्बूक ऋषि का इतना ही जुर्म था कि वह शूद्र होकर तपस्या कर रहा था।

युग–युग से ब्राह्मणों द्वारा शूद्र सताये गये हैं, लेकिन आज भी उनकी नींद नहीं खुली है। प्रजातंत्र में वोट के आधार पर नेता चुने जाते हैं, 'वोट' के महत्व को ये शूद्र, दलित एवं पिछड़े नहीं समझ पा रहे हैं। आश्चर्य तो तब होता है जब ये कुचले जाते हैं, दबाये जाते हैं, तिरस्कृत किये जाते हैं फिर भी वोट के महत्व को नहीं समझते। इसका कारण क्या है? वोट के समय ये स्वार्थी हो जाते हैं। सालभर पैसे का अभाव रहता है। एक ही रात में सौ दो सौ मिल जाते हैं। वे समझते हैं कि मेरे सौभाग्य का सूर्य उदय हो रहा है, इसलिए वे पैसे लेकर वोट बर्बाद कर देते हैं। जिस दिन उन्हें यह ज्ञात हो जायेगा कि हम 85% के लोग राजा हैं, और ये वोट मांगने वाले मेरे नौकर हैं उसी दिन उनकी गरीबी और भुखमरी दूर हो जायेगी।

लेकिन ये जागेगा कब?

आजादी को पाये 78 वर्ष पूरे हो गये, ये गरीब के गरीब हैं। उन्हें आरक्षण दिया गया, लेकिन क्या इन्हें लाभ मिला? इन दलितों और

• डॉ. नागेश्वर प्र. राम

पिछड़ों के दिमाग में एक बात जम गई है कि ये वोट मांगने वाले सिर्फ एक दिन के लिये मेरे पास आयेंगे और फिर चले जायेंगे। इसलिए जितना पैसा हो सके, इनसे ले लो। यही कारण है कि ये अन्य दलों के उम्मीदवार से भी पैसे लेकर वोट नहीं देते हैं।

टिकट बांटने वाले की भी गलती है। वे दलितों एवं पिछड़ी जाति बाहुल्य क्षेत्र में भी सवर्णों को, ऊंची जाति वाली को टिकट दे देते हैं, दलित एवं पिछड़े वर्ग के लोग हतोत्साहित हो जाते हैं और सोचते हैं कि ये उम्मीदवार तो अगड़ी जाति के हैं, मेरे लिये काम नहीं करेंगे, इसलिए वोट पैसे लेकर बेच दो।

आज जरूरत इस बात की है कि कोई उसे बताये कि मैं भी तुम्हारी तरह पिछड़ी जाति का हूं, मैं दलितों के विकास के लिए कार्य करूंगा, तब उन्हें भरोसा होगा और वे उचित राह पर आयेगा। उन्हें जगाना होगा–बहलाना होगा–समझाना होगा, तुम कब जागोगे?

एकलव्य धीर और वीर था। गुरु द्रोणाचार्य ने देखा कि वह अर्जुन को हरा सकता है, इसलिये छल से उसने उसका अंगूठा कटवा लिया। आज तुम छले जा रहे हो। तुम्हारी जनसंख्या उनसे चार गुनी अधिक है लेकिन तुम उनकी चाकरी करते हो, चापलूसी करते हो, उनके पीछे–पीछे चलते हो। कब वे तुम्हारे पीछे चलेंगे, यही सोचो। बहुत दिन तुम पीछे चले, अब जागो, उठो और उनको पीछे चलने के लिए कहो। यह कब होगा? जब तुममें बुद्धि आयेगी, जब तुम संगठित होओगे, जब तुम एक झंडे के नीचे खड़े होकर एक महामंत्र का उच्चारण करोगे–'हम एक हैं', हम पिछड़ों की संख्या का उद्घोष दलित एवं पिछड़े वर्गों के समुदाय में होगा तो टिकट वितरण करने वालों की नींद खुल जायेगी। 85 प्रतिशत टिकट दलितों और पिछड़ों को दिया जायेगा। जब टिकट ही पिछड़ों को मिलेगा तो जीत इसी की होगी। पिछड़ों और दलितों का विकास होगा। अगड़ी जाति से ये भीख नहीं मांगेगे। इन्हें अपना हक मिलेगा और इनके पीछे–पीछे सारे लोग चलेंगे, अब तक इन लोगों ने चलाया 'अब तुम जागो', टिकट लो और इनको पीछे–पीछे चलने के लिये बाध्य करो। यह तभी संभव है जब तुम जागोगे और संगठित हो जाओगे। •

हिमायती

हिन्दी पाक्षिक पत्र

अम्बेडकर मिशन का प्रतिनिधि पत्र है। इसे मंगाइये, पढ़िए और दूसरों को पढ़ाइये। इससे जन चेतना जागृत होगी और दलित संघर्ष तीव्र होगा। इसका सहयोग वार्षिक शुल्क 100/- और आजीवन 1000/- मनीआर्डर से आज ही भेजें–

सम्पादक :
हिमायती
बी 3/9, दूसरी मंजिल,
माडल टाउन-1,
दिल्ली-110009

स्वामी, सम्पादक/ प्रकाशक एवं मुद्रक डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर द्वारा वन्दना आफसेट प्रिन्टर्स, A-9 सराय पीपलथला एक्सटेंशन, दिल्ली-33 में मुद्रित तथा रजि. कार्यालय : 233 टैगोर पार्क, माडल टाउन, दिल्ली-9 से प्रकाशित। ❑ सह सम्पादक एवं व्यवस्थापक - जय सुमनाक्षर, मो. 9810278936 **Email-sumanakshar@ymail.com**

नोट : हिमायती में प्रकाशित रचनाओं के लिए सम्पादक की सहमति जरूरी नहीं। हिमायती से सम्बन्धित किसी भी कानूनी कार्रवाई का क्षेत्र दिल्ली न्यायालय तक ही सीमित है।

सम्पादकीय कार्यालय : बी 3/9, दूसरी मंजिल, माडल टाउन-1, दिल्ली-110009